❊ श्रीश्री गौरगदाधरौ विजयेताम् ❊

❊ ऐश्वर्यकादम्बिनी ❊

श्रील बलदेवविद्याभूषणविरचिता

544

SHRI KESAV...

श्री हरिदासशास्त्री

वृन्दावनपुरन्दर रसराजमूर्त्तिधर त्रिभुवनमनविमोहन ।
राधाहृदयबन्धु रासलीलारससिन्धु व्रजवासिगणप्राणधन ।।

जयजय श्रीनन्दनन्दन ।
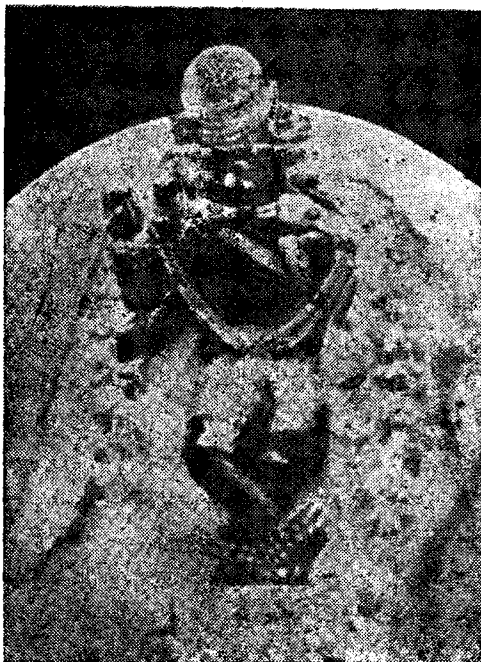
* श्रीश्री गदाधरगौराङ्गौ जयत *
* श्रीश्री राधागिरिधरौ विजयेताम् *

ऐश्वर्य कादम्बिनी

श्रील बलदेव विद्याभूषण विरचिता

श्री धामवृन्दावनीय कालीयह्लदोपकण्ठवास्तव्येन न्याय वैशेषिक शास्त्र, नव्यन्यायाचार्य काव्य, व्याकरण, सांख्य, मीमांसा, वेदान्त, तर्क, तर्क, तर्क, वैष्णवदर्शनतीर्थ विद्यारत्नाद्युपाध्यलङ्कृतेन

श्रीहरिदासशास्त्रिणा
सम्पादिता।

सद्ग्रन्थ प्रकाशक:
श्री गदाधर गौरहरि प्रेस,
श्री हरिदास निवास
कालीदह वृन्दावन,

Shri KESHABJI GOUDIY
Mathura (U.P.)
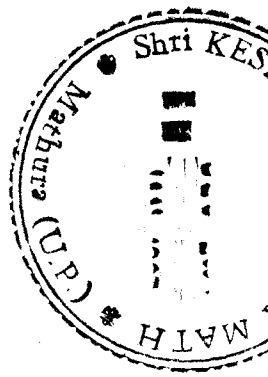
* श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेतेतमाम् *

* विज्ञप्तिः *

— —*— —

ऐश्वर्य कादम्बिनी नामक ग्रन्थरत्न मुद्रितहुआ, ग्रन्थ प्रणेता गौड़ीय वेदान्ताचार्य श्रीगोविन्दभाष्यकार श्रीबलदेवविद्याभूषण हैं।

आपने षट्सन्दर्भ टीका, लघुभागवतामृत टीका, सिद्धान्तरत्न, वेदान्तस्यमन्तक, प्रमेयरत्नावली, सूत्रमालिका, सिद्धान्तदर्पण, श्री श्यामानन्दशतक टीका, नाटकचन्द्रिका टीका, साहित्य कौमुदी, छन्द कौस्तुभ, काव्यकौस्तुभ, श्रीमद्भागवतकी वैष्णवानन्दिनी टीका, श्री गोपालतापनीटीका, श्रीभगवद्गीताभाष्य, श्रीविष्णुसहस्रनामभाष्य, उपनिषद्भाष्य, स्तवमालाभाष्य, ऐश्वर्य कादम्बिनी प्रभृति ग्रन्थावलि रचना द्वारा विशुद्ध व्रजभक्तिप्रतिपादक गौड़ीय वैष्णव साहित्य की प्रभूत सेवा की है। प्रस्तुतग्रन्थ उनस्तुत्य कृत्यकाही प्रकृष्ट दृष्टान्त है।

इसमें क्रमशः 'सप्तमी वृष्टिमें' सात प्रकरणों में १, त्रिपादविभूति, २, पादविभूतिगत पुरुषादि, ३, श्रीवसुदेव नन्द प्रभृति के वंशादि, ४, श्रीनन्दराजधानी, ५, श्रीभगवान् के जन्मोत्सव। ३, श्रीकृष्ण की बाल्यादि क्रमलीला, ७, श्रीकृष्ण जीका पुनर्बार व्रजागमन वर्णितहै, ।

श्री हरिनाम परायण परममङ्गलमय, श्रीकृष्णदेव सार्वभौम प्रमुख वैष्णववृन्द, श्रीराधाकृष्ण की शुद्ध ऐश्वर्य लीला का वर्णन साहित्य में न होने के कारण अतिशय खिन्न थे। उनसव के हार्दिक निर्देशानुसार उन सवको आनन्दित करने केलिए श्रीमद्भागवतीय क्रम लीलाके अवलम्बन से अनुपम आनन्द दायक ऐश्वर्यकादम्बिनी नामक ग्रन्थ की रचना आपने की।

विशेषतः श्रीवृषभानु महाराज, श्रीभानुनन्दिनी, एवं सखा सखी वृन्द के विवरणका परिवेषण, परिपूर्ण ऐश्वर्य रीतिसे निर्वाह होनेके कारण अमृत वर्षुक मेघके समान ही प्रस्तुतग्रन्थ अनवद्य तृप्ति प्रद हुआहै।

हरिदासशास्त्री।

* ज्ञापिका *

श्री श्री गौरगदाधरौ विजयेताम्
श्रीश्री राधा गिरिधरौ जयत:

★

श्रील बलदेव विद्याभूषण विरचिता

ऐश्वर्य्य कादम्बिनी

श्रीमद्भागवताय नम: ॐ गौराय नम:

प्रथमा वृष्टि:

कृष्णाभिधायै कनकाम्बरायै श्यामाब्जतन्वै सरसीरुहायै
नित्यश्रियै नित्यगुण व्रजायै नमोऽस्तु तस्यैपरदेवतायै ।।१।।
सनातनं रूपमिहोपदर्शयन्नानन्दसिन्धुं परित: प्रवर्द्धयन्
अन्तस्तमस्तोम हर: स राजतां चैतन्यरूपो विधुरद्भुतोदय:।२

पीतवसनधारी नीलसरोजके समान अङ्गकान्ति पद्म पलाशलोचन श्रीराधा विहारी निखिल कल्याण गुण मण्डित श्रीकृष्णनामधेय परमदेवताको नमस्कार करता हूँ।।१।।

जो इस जगत में नित्यरूप को प्रकटकर आनन्द सागर को चारों और विस्तारकर जोवों के अन्त: स्थित अज्ञानराशिको नाश करता है वह अद्भुतोदय चिन्मय श्रीकृष्ण सर्वदा विराजमान हो।

जो इस जगत में श्रीरूप सनातन नामक पार्षदद्वय को प्रकट कर इतस्तत: आनन्द सागर को उच्छलित कर अन्तरस्थ अज्ञान राशि को हरण करता वह अद्भुतोदय श्री चैतन्य कृष्ण विराजित हो।

जो चिदात्मा रूप चन्द्रमा निज सदाकालीन रूप को प्रकट कर आनन्द रूप सागर को बढ़ाकर अन्तर के अन्धकार समुह का विनाश करता है वह अद्भुतोदय ज्ञान चन्द्र सदा विराजित हो ।।२।।

वहु भूमसौध--सदृशो विज्ञानघनो वहिस्तोमस्तोमात् ।
परम--व्योमाभिख्यो-विभाति विष्णो र्महाद्भुतो लोकः

आस्ते कृष्णो यत्र नारायणात्मा व्यूहै र्जुष्टो
वासुदेवादि संज्ञैः ।
कुर्व्वन् क्रीड़ां पार्षद ग्राम--सिद्धां
दीव्यद् भूति नारसिंहादि-रूपी ॥४

नित्यं लक्ष्मी र्यमुपास्ते स्व--नाथं नानारूपा
वहुरूपं परेशं ।
चित् सौख्यात्मा स्वसमाभिः सखीभिः
सर्वेशाना वहु सम्भार पूर्णा ॥५॥

दोव्यति तदुपरि लोकः कुशस्थली मधुपुरी-व्रजाभिख्यः ।
यस्मिन् विलसति कृष्णो जनैःस्वकोयैः सदेवकी-सूनुः ॥६

सार्वभौम नरपति के बहुविध चित्रकलामण्डित आलोक पूर्ण अट्टालिका के समान विज्ञानात्मा एवं आवरणशीला प्रकृति के वाहर पर व्योम नामक श्रीविष्णु के एक महा अद्भुत लोक प्रकाशित है॥३॥

वहाँपर श्रीकृष्ण नारायण स्वरूप में वासुदेवादि चतुर्व्यूह द्वारा सेवित होकर दिब्य दिब्य विभूति सम्पन्न नरसिंह प्रभृति रूप को प्रकट कर पार्षद समूह के साथ निरन्तर क्रीड़ा करते हैं ॥४॥

उन प्राणनाथ वहुरूपी परमेश्वर श्रीविष्णु की ज्ञानानन्द स्वरूपिणी सर्वेश्वरी लक्ष्मी नाना रूप धारण कर निज समान सखीगण के साथ सदा काल के लिए वहुविध सामग्री के द्वारा देवा करती रहती है॥५॥

उसलोक के उपरि भाग में द्वारका, मथुरा, एवं व्रज नामक लोक समूह विद्यमान हैं, वहाँपर श्री देवकी नन्दन श्रीकृष्ण स्वीय

द्वारावत्यां मधुपूर्य्याञ्च कृष्णं
शैनेयाद्यै रुद्धवाद्यैश्च पूज्यम् ॥
नाना सम्पन्निभृतायां परेशं
रुक्मिण्याद्याः संभजन्ते श्रियस्तम् ॥७

श्री गोकुले हरि रसौ व्रजनाथ सूनुः
श्री चर्च्चिते वहुसखोऽस्ति सभृत्यवर्गः
श्री राधिका प्रियसखीभिरधीश्वरीयं
संसेवते स्व सदृशीभिरनन्यवृत्तिः ॥ ८

एवं रूपो हरि रुद्भाति नित्यं
यद् गोपालोपनिषत्तं तथाह ।
प्रादुर्भावं सकदाचित् प्रपञ्चेऽप्यञ्चेत्
स्वामी सकलांशै बिशिष्टः ॥९

जनगण के साथ नित्य विलास करते हैं ॥ ६ ॥

विविध सम्पत्ति—पूर्ण द्वारका में सात्यकि प्रभृतिके द्वारा एवं तथाविध मथुरा में उद्धवादि द्वारा पूज्य परमेश्वर श्रीकृष्ण रुक्मिणी सत्यभामादि महिषी वृन्द के साथ सम्यक् प्रकार से सेवित होते हैं ।७।

श्रीलक्ष्मी के भी वाञ्छनीय श्री गोकुल में श्रीव्रजेन्द्रनन्दन हरि ही अनेकानेक सखा एवं भृत्यगण के साथ विराजते हैं, एवंअधीश्वरी श्रीराधा भी स्व सदृशी प्रिय सखीगण के साथ अनन्य चित्त से उनकी सेवा करती रहती है ॥ ८ ॥

इस प्रकार प्रपञ्चातीत धाम समूह में उक्त श्रीहरि नित्य क्रीड़ाशील होकर रहते हैं, श्रीगोपालतापनी उपनिषद् की उक्ति ही

मधुरैश्वर्य्य–चरित्र रूपवत्त्वान्मधुराद्
वेणुरवाच्च नन्द–सूनुः।
प्रियतमतापूर्ण-तमाज्जन व्रजाच्च
स्फुट मुक्तः कविभि र्विभुर्वरीयान् ॥१०

इत्यैश्वर्य्य–कादम्बिन्यां भगवतत्रिपादविभूति
वर्णनं नाम प्रथमा वृष्टिः ॥

द्वितीया वृष्टिः

सङ्कर्षणो-हरिरथ प्रलयावसाने
जीवानुदीक्ष्य करुणः क्षुभितान् समन्तान्।
प्रैक्षिष्ट स्व प्रकृति मण्डघटा स्ततस्तु
प्रादु र्बभूवु रुरुभोगचयान् दधानः ॥१

उस प्रकार है। वह जगत् स्वामी किसी समय सकल अंश के साथ ही प्रपञ्च में आविर्भूत होते हैं॥ ९॥

श्री नन्दनन्दन—मधुर ऐश्वर्य्य मण्डित चरित्रवान्(लीलाशील रूपवान्—मधुर वेणुवादक—प्रेम परिपूर्ण परिकर परिमण्डित होने के कारण कविगण उनको परिस्फुट रूपसे विभु एवं वरीयान् सर्वश्रेष्ठ प्रभु, कहते हैं॥ १०॥

॥ इति प्रथमा वृष्टिः

—※—

द्वितीया वृष्टिः

सङ्कर्षण नामक श्रीहरि (प्रथमपुरुष प्रलयान्त में समस्त जीवगण को चञ्चल देखकर करुण होकर निज प्रकृति के प्रति निरीक्षणकिये। तदनन्तर भोग सामग्रीको धारण कर ब्रह्माण्डावली का प्रादुर्भाव हुआ

तेषां स्व गर्भेषु हरि स्तदाऽभूत्
प्रद्युम्न संज्ञो जनको विरिञ्चेः ।
भवन्ति यस्मात् वह्वोऽवतारा
मीनादयोऽनन्तगुणा विभुम्नः ॥ २॥
अन्तर्य्यामी व्यष्टि–जीव व्रजानां
जात स्तेषु क्षीर धिस्थोऽ निरुद्धः ।
साद्धं देवैःक्रीड़ति प्राज्यतेजा
स्तेषां शत्रुन्नाशयन् यः समन्तात् ॥ ३ ॥
यदा यदा राक्षस सैन्य जाले
र्धर्म्म-क्षतिः स्यात् प्रशमाय तस्याः ।
तदा तदा श्रीमहिलः सरामः
स वासुदेवश्च भवेत् कदाचित् ॥ ४।

उक्त ब्रह्माण्ड समूह के मध्य में उक्त श्रीहरि उस समय प्रद्युम्न नाम से विराजित हो गये, आप ही विरिञ्चि (ब्रह्मा) के पिता हैं। उन सर्वव्यापक श्रीप्रभु से अनन्त गुण सम्पन्न अनेक अनेक अवतार होते हैं ॥ २ ॥

अनन्तर व्यष्टि (पृथक् पृथक्) जीव समूह के अन्तर्य्यामी होकर आप ही पुनर्बार क्षीरोद सागरस्थ 'अनिरुद्ध' रूप में उक्त ब्रह्माण्डावली में प्रकाशित हुये। आप महा तेजस्वी हैं, देवशत्रुयों को सम्यक् विनाश कर निरन्तर देवगण के साथ क्रीड़ा करते हैं।३

जव जव असुर सैन्य द्वारा धर्म की क्षति होती है–तव तवउसका प्रशमन के लिए वह लक्ष्मी कान्त--राम (बलदेव) तथा वासुदेव (व्यूह) के साथ किसी समयविशेष में अवतार ग्रहण करते हैं ॥४॥

प्रह्लादं यः खिद्यमानं स्व मृत्यं
वीक्ष्य स्तम्भादावीरासीन्नृसिंहः ।
उग्रोऽदारीत्तद्रिपुं सानुकम्पः
श्री गोविन्दो नन्दसूनुः स जीयात् ॥५ ॥
स्वयं हरिः स कदाचित् सधामा
स–पार्षदो यदि गच्छेन्नृलोकम् ।
भुवो भरः स तदेयात् प्रनाशं
भवेद् वहुः स्वजनानां प्रमोदः ॥ ६ ॥
आविर्भवेत् प्रथमं धामविष्णोः
पित्रादयः क्रमत स्तत्र मुख्यः,
पश्चादसौ रमया तद् समाभिः
सार्द्धं प्रभुः परमर्द्धिः प्रियाभिः ॥७ ॥

जो निजभृत्य प्रहलाद के दुःख समूह को देखकर स्तम्भसे श्रीनृसिंह रूप में अति उग्र मूर्त्ति को प्रकट कर निज शत्रु को वध किऐ थे। वह दयालु नन्दनन्दन श्रीगोविन्द सर्वदा जययुक्त हो ॥ ५ ।

यदि किसी समय वह श्रीहरि स्वयं निज धाम एवं पार्षद गण के साथ नरलोक में आगमन करते हैं—तव पृथिवी का भार हरण होता है, एवं निजजन (भक्त) गण को अनेक विध आनन्द प्रदान होता हैं ।६

प्रथमतः श्रीविष्णु धाम का आविर्भाव होता है, पश्चात् पित्रादि मुख्य मुख्य गुरुगण, आविर्भूत होते हैं, अनन्तर उक्त श्री-प्रभु परम समृद्धियुक्त होकर भी प्रिया लक्ष्मीगण के साथ आविर्भूत होते हैं ॥ ७ ॥

उक्त पार्षदगण में निखिल विद्या स्वयं ही समुपलब्ध हैं, अखिल

विद्या स्तत्र स्वयमेव प्रभाता
श्चातुर्य्याण्यखिलाः पार्षदेषु
स्व स्वापेक्ष्या हरि भक्तिः प्रतोता
विभ्राजेरन्निखिलाः सम्पदश्च ॥ ८ ॥

इत्यैश्वर्य्य कादम्बिन्यामेकपाद-विभूति
भगवत् पुरुषाद्याविर्भावक्रमवर्णनं
द्वितीया बृष्टिः ॥ २ ॥

तृतीया वृष्टिः

वृष्णिवंशे देवमीढ़ः स योऽभुत्
भार्य्ये तस्य क्षत्रियार्य्ये प्रसिद्धे ।
शूरा भिख्यः क्षत्रियायां कुमारः
पर्ज्जन्याख्यः सम्बभूवार्य्यकायाम् ।१
शूरादासीद्वसुदेवो महात्मा
पत्नी यस्य प्रगुणा देवकी सा ।

चातुरी स्वतः ही समुत्पन्न हैं भावानुयायी श्रीहरिभक्ति इन सब को वरण करती-रहती है एवं सकल सम्पद ही इन सब के कर तलगत हैं ।८

इति द्वितीया बृष्टिः ॥ २ ॥

—❀—

तृतीया वृष्टिः

वृष्णिवंश में देवमीढ़ नामक एक नरपति था, उनकी क्षत्रिया और अर्य्या नामक दो पत्नी प्रसिद्ध रही । क्षत्रिया से शूर और अर्य्या (वश्या) से पर्ज्जन्य नामक दो कुमार उत्पन्न हुए ॥ १॥

शूरसे "वसुदेव" नामक महात्मा का आविर्भाव हुआ था,

पर्ज्जन्यात्तु व्रज भूपात् सनन्दो
पत्नी यस्योत्तम कान्ति र्यशोदा ॥२॥
यस्मिन् जाते त्रिदेवेशै रकारि
प्रीत्युत्फुल्लै र्वर वादित्र—घोषः ।
स्थानं विष्णो र्वसुदेवं स शोरि
र्मान्यो दाता द्विजसेवी बभूव ॥ ३ ॥
वैयासकि र्यां किल सर्वदेवतां
जगाद विद्वानपि देवरूपिणीम् ।
सा देवकी विश्वधरं महेश्वरं
दधार कुक्षौ किमु चित्र मुच्चैकः ॥४॥
नन्दः श्रीकान्त---भक्तो व्रज धरणि पतिः
शास्त्रविद्धर्मनिष्ठः
सामन्तैः स्निग्ध चित्तैरपि सचिववरैः
शासनस्थै र्वरिष्ठः ।

इनकी निखिल गुण मण्डिता पत्नी का नाम ही देवकी । व्रज नृपति श्रीपर्ज्जन्य से श्रीनन्द का आविर्भाव हुआ था, इनकी महारूपवती भार्य्या का नाम ही यशोदा ॥ २ ॥

जिन के जन्मसमय में आनन्द भर से उत्फुल्ल देवमण्डली "दुन्दुभि" आदि वाद्ययन्त्र वजाये थे। श्रीविष्णु के प्रकाश स्थान वह शौरि (वसुदेव) लोक मान्य, दाता, द्विजसेवी थे ॥३ ॥

महा मनीषी श्रीशुकदेव जिनका वर्णन सर्व देवतामयीदेवकी देव रूपिणी शब्द से किए हैं। वह देवकी विश्वधारकमहेश्वर को अपनी कुक्षि में धारण किए थे ! अहो !! इस से और विस्मय का

प्राकारी वरसौधोऽ परिमितधवल
श्चित्र वादित्र नादैं
जुंष्टो यानै रथादयै र्वंहुविध विभवः
सर्वमान्यः स आसीत् ॥५॥

विष्णु र्विश्वञ्चोषतुः कुक्षिकोणे
यस्या स्तन्येनाप तृप्तिं स भूमा ।
लक्ष्मीः पादौ सादरात्मा ववन्दे
सा कल्याणी केन वर्ण्या यशोदा ॥६ ॥

वन्धवो व्रजपते र्वंहुविद्याः
साग्नयो हरि—गुरु—दिज—भक्ताः

विषय क्या हो सकता है ? ॥ ४ ॥

श्रीलक्ष्मी कान्त भक्त व्रज नरपति श्रीनन्द शास्त्रवित् एवं धर्मनिष्ठ थे । स्निग्ध चित्त सामन्तगण एवं शासनाधीनमन्त्रो मण्डली उनकीसेवाकरते थे। उनके प्राचीरयुक्त रत्नमय अट्टालिका था, असंख्य धवल (बृष-एवं धेनु) प्रभृति थे । आप विचित्र वाद्य ध्वनि से मुखरित उस राज धानी में रथादि यान में आरोहण कर सुखानुभव करते थे। इस प्रकार नाना वैभववान् वह श्रीनन्द महाराज सर्व मान्य हुए थे ॥ ५ ॥

विष्णु एवं समग्र विश्व जिन के कुक्षि कोण में अवस्थित हैं-वह भूमा(विराट) पुरुष जिनके स्तन्य पान से तृप्त हुऐ हैं—एवं लक्ष्मी भी आदर पूर्वक जिन के पाद युगल की वन्दना करती थी-उन कल्याणी यशोदा के गुण—गरिमा का वर्णन कोन कर सकते है ? ॥ ६ ॥

श्री व्रजराज के बन्धुगण सव ही विद्वान् साग्निक एवं हरि, गुरु

सम्पदोऽति विपुलाः किल येषां
　　धेनवो बहु हयाश्च विरेजुः ॥ ७ ॥
आसीत् सखा वृषभानु र्महीपो
　　नन्दस्य यो गुण वृन्दै र्वरीयान् ।
कन्या यतः प्रगुणा राधिका सा
　　वेदः श्रियामधिपां यामवोचत् ॥ ८ ॥
प्रीतिं यस्मिन् सुष्ठु तौर्य्यत्रिकज्ञाः
　　प्रापुः सूता मागधा वन्दिनश्च ।
सर्वभिज्ञा दर्शित-स्व स्व-विद्या
　　यस्मात् कामान् लेभिरे तेऽभिमृग्यान् ॥ ९ ॥
दानाम्भसां यस्य नदीभिरुच्चै
　　र्नीवृन्नदी मातृकतां दधार ।

द्विज भक्त थे, उन सब के प्रभूत सम्पत्ति, बहु बहुधेनु एव अश्वादि थे।७

वृषभानुराजा नन्द महाराज के सखा थे-आप निखिल गुणी से वरीयान् थे, उनकी निखिल कल्याण—गुणगण-सेविता कन्या ही "श्रीराधा"। वेद इन की वर्णना लक्ष्मी गण की अधीश्वरी (सर्व लक्ष्मीमयो) रूपमें किए हैं ॥ ८॥

यह राजाके व्यवहार से नृत्य गीत वाद्य परायण जनगण, सूत, मागध, वन्दीगण सभी सम्यक् प्रीति लाभ करते थे—कलाविद् गण निज निज विद्या प्रदर्शन कर उनके समीपसे सब प्रकार अभीष्ट लाभ करते थे ॥ ९ ॥

उनके दान रूप जलमय—प्रवाह से उच्चदेश भी नदी मातृक (नदी जल जात शस्य पालित) हुआ था एवं अभीष्ट पूरक कल्प

कल्पद्रुमाः काम दुघाश्च शश्वत्
कामान् समस्तान् ववृषु मनोज्ञान् ॥१०॥
गोवर्द्धनो यस्य सरत्न शैलः
सुनिर्झरः कन्दर-मन्दिराढ्यः ।
पुष्पैः फलैः सह् यवसैश्चरम्यो
यथार्थनामा विततान सेवाम् ॥११॥

इत्यैश्वर्य्य-कादम्बिन्यां वसुदेवो नन्दयो
वृष्णि वंशोद्भवेत्यादि—वर्णनं
तृतीया वृष्टिः ॥३ ॥

चतुर्थो वृष्टिः

बृहद्वने यस्य बृहत् कपाटं
पुरं बृहत् सौधवरं बभासे ।
अजन्मनो जन्म हरस्य यस्मिन्
बभूव जन्म प्रगुणस्य विष्णोः ॥ १॥

वृक्षगण भी समस्त मनोज्ञ कमनीय वस्तुराजि का निरन्तर वर्षण करते थे ॥ १० ॥

उनके रत्नमय पर्वत गोवर्द्धन में उत्तमोत्तम निर्झर था—गुहा मन्दिर से पूर्ण था पुष्प फल एवं उत्तम वासस्थल द्वारा रमणीय वह गोवर्द्धन (गोगण वर्द्धन कारी) नाम को सार्थक कर श्रीनन्द महाराज की सेवा करते थे ॥ ११ ॥

इति तृतीय वृष्टिः । ३ ॥

चतुर्थो वृष्टिः

महावन में श्रीनन्द महाराज के प्रकाण्ड प्रकाण्ड कपाट युक्त

भानुभूप भवनं यदन्तिके
कान्ति—कन्दल सुपुष्कलं वभौ ।
प्रेयसी व्रजविधो महेश्वरी
सम्बभूव किल यत्रराधिका ॥२॥
नन्दीश्वराद्रे र्मणिचित्र—सानो
रूपेत्यकायां वहुनिर्झरस्य ।
पुष्पैः फलैश्चाति मनोहरस्य
पुरं व्रजेशस्य महत्तदासोत् ॥ ३ ॥
यस्मिन् विचित्रै र्मणिभिः प्रणोता
भान्ति स्म हर्म्यार्टटक--निष्कुटादयाः ।

एक पुरी है, उस में अतिवृहत् अट्टालिका राजि भी वर्त्तमान—है यहांपर ही जन्मनाशन अज (जन्मरहित) निखिल कल्याण–गुणाकर श्रीविष्णु का जन्म, प्रादुर्भाव हुआ था ॥ १ ॥

इसके निकट में ही श्री वृषभानु राजा की नगरी वर्त्तमान है–वह भी कान्ति राशि के उद्गम से सर्वोत्तम होकर उद्भासित है, इस स्थानमें ही व्रजचन्दमा की प्रेयसी महेश्वरी राधा आविर्भूतहुई । २ ।

नन्दीश्वर पर्वत के सानुदेश (समतलभूमि) समूह विचित्र मणि खचित है, उस में अनेक अनेक झरणा है, उक्त पर्वत पुष्प एवं फलसे अति मनोरम शोभित है । इस की उपत्यका में (सन्निकट भूमि में) व्रजेश्वर की (अन्यतम) सर्वप्रधान पुरी वर्त्तमान है ॥ ३ ॥

उक्तपुरी मणिगण निर्मित में विचित्र प्रसाद, अट्टालिका, उप वनादि विराज मान है, एक समान सूंत से उसकी विपणी (दूकान) श्रेणी सज्जित है । कूप सरोवरादि उस प्रकार सुश्रेणी वद्धहै ॥ ४ ॥

उक्त पुरी में वहु वहु रत्न मय तोरणद्वार विशिष्ट प्रकाण्ड

समान सूत्रै विहिता विपण्यः
कूपाः सरस्यश्च तथाविद्या स्ताः ॥४॥
यदहरन्मनो रत्नगोपुरै
रुरुभिइष्टभिश्चारुगोपुरैः ।
रुरुचिरे भृशं येषु रक्षिणः
कनक भुषणा भुपपक्षिणः ॥ ५ ॥
यन्मध्यमं व्रजपतेः किल सप्तभूमं
सौधराज विमलं विलसत्पताकम् ।
वैदूर्य्य–विद्रुम मसारमणि–प्रणीत–
स्तम्भालिजालवलभी–कुल सत्वलोकम ॥ ६ ॥
निरस्तमायाऽपि विचित्रमाया
वासो रमाया निखिलाच्चितस्य ।

प्रकाण्ड आठ सुचारु गोशाला है, स्वर्णालङ्कार धारी श्रीनन्द महाराज द्वारा नियुक्त बहु बहु रक्षक उक्त द्वार समूह में इतस्तत. सञ्चालन द्वारा दीप्ति माला का विस्तार करते रहते हैं ॥ ५ ॥

उसके मध्य देश में व्रजराज की सप्ततालविशिष्ट विमल अट्टालिका विराज मान है, उस में पताकाराजि उड्डीय मान हो रहे है, उस के स्तम्भराजि, गवाक्ष, चन्द्रशाला प्रभृति एवं बलीक (चाल को छाँच इत्यादि भी वैदूर्य्य प्रवाल, इन्द्रनीलादि मणिसमूह द्वारा खचित है ॥ ६ ॥

वह माया (अज्ञान अविद्यादि) रहित होने पर भी उसमें विचित्र माया (इन्द्रजालादि विद्या, वुद्धि अथवा कृपादि) थी । वह लक्ष्मी देवी की वास भूमि थी–एवं सर्व वन्दनीय श्रीनन्द महाराज

सभाः सभानन्द नृपस्य यस्मिन्
समाजिता शिल्पिवरै रदीपि ॥ ७ ॥
इन्द्रगर्व हर–पर्व–भूषितै
र्यस्य राजपुरुषै रधिष्ठिताः ।
तोरणाश्च कनकादि–निर्मिताः
प्रोज्जिहान–मणि तोरणावभूः ॥८॥
नलिकावलि–वर्त्मभि र्जलौघैः
कटकस्थात् सरसः समुत् पतद्भिः ।
सदनेषु सनिष्कुटेषु यस्मिन्
जल यन्त्राण्युदगु विचित्र भानि ॥९॥
वैदूर्य्य–वज्रादि-विनिर्म्मितानि
स्फुरत्पताकान्यनिशोत्सवानि ।

के उक्त उज्ज्वल गृह सर्व श्रेष्ठ शिल्पीगण के आदरणीय था ॥७॥

उसके मणिमय तोरण–द्वार विजयी स्वर्णादि निर्म्मित तोरण द्वार समूह में इन्द्र के कृष्ण के उतसवादि में अथबा गोवर्द्धन पूजा के समय भूषित राज पुरुषगण अवस्थान करते थे ॥८॥

उक्त नन्दीश्वर पर्वत के मध्यदेशस्य सरोवर से समुत् पतित जलराशि—प्रणाली ससह द्वारा उपवन मण्डित गृह समूह में चालित होकर विचित्र प्रभा–शोभित जलयन्त्र (फोयारा) समूह के अभ्यु-त्थान सम्पादन करते थे । ९ ॥

उक्त पुरी में वैदूर्य्य--दीरकादि–खचित पताकादि शोभित एवं निरन्तर उत्सवमय प्रचुर कान्तिमय गृहराजि वर्त्तमान है। उस में लक्ष्मी कान्त विष्णु अवस्थान करते हैं ॥ १० ॥

सद्मानि पद्म–महिलस्य विष्णो
र्वभुः प्रभूतद्युतिमन्तियस्मिन् ॥ १० ॥
स्थिरचयो वृहद्दलयोच्छ्रितः
कपिशिरश्चयै रतिमञ्जुलः
गिरिसराम्बुभृत्परिखाञ्चितो–
यदमितोऽलसद्वरणोवरः ॥११॥
बन्धन–कृशिम–कर्दम–शब्दाः
केशमध्य मृगनाभिषुयस्मिन् ।
चामरादिषुच दण्ड–निनादः सोर्म्मितारतसरित्सरसीषु ॥
तीक्ष्णता–कठिनते युवतीनां वर्णित किलकटाक्षकुचेषु

उक्त पुरी के चतुर्दिकमें एक सुमहान प्राकार का वेष्टन है, उस में बहु बहु वृक्ष है, वे सव अति वृहद् आकार, गोलाकार एवं अति उच्च है। उक्त प्राचीर के अग्रभागसमूह भी अतीव मनोहर है, उस में पार्वत्य झरणा के जल भी है,एवं परिखा भी (गड़खाइ) है ॥

उक्त पुरी में केश बन्ध में बन्धन शब्द का प्रयोग होता है, (अन्यत्र चोर दस्यु प्रभृति में नहीं) कृश शब्द कटि मध्य देश में व्यवहृत होता है, (अन्यत्र नहीं) एवं कर्दम शब्द भी मृगनाभि में ही प्रचलित है, (अन्यत्र पङ्कादि में नहीं इस प्रकार चामरादि में दण्ड शब्द का प्रयोग होता है (नीति में नहीं) एवं नदी सरोवर प्रभृति में उर्म्मि शब्द का प्रयोग होता है किन्तु वुभुक्षा, पिपासा शोक मोह, जरा मृत्यु षड़ुर्म्मि में नहीं ॥ १२ ॥।

उक्त पुरी में युवतीयो के कटाक्ष एवं कुचयुगल की वर्णन में केवल तीक्ष्णता एवं कठिनता शब्द का प्रयोग होता है, एवं मुक्ता

छिद्रिता–कुटिलते क्रमतस्ते मौक्तिकेषु च कचेषुयत्र ।१३
पुरंवृहत्सानुगिरे रुपान्ते हरेःप्रिय तादृशमुद्भभासे, ।
सरस्वती–जुष्ठमधिप्रवीरं यदध्यतिष्ठद्वृषभानुभूपः ।।१४

इत्यैश्वर्य्य-कादम्बिन्यां श्रीनन्द-नृपराजधानीवर्णन चतुर्थी वृष्ठिः ।।४।।

=*—

पञ्चमी वृष्टिः ।।

प्रादुर्भूतोनन्दमेव सकृष्णः
श्रीमान्शौरीञ्चाविवेशाम्बुजाक्षः ।।
ताभ्यांन्यस्तं वैधदीक्षान्विताभ्यां
तत्पत्न्यौ सम्प्राप्य तं दध्रतुस्ते ।।१
सख्योस्तयोर्देवगर्मत्व–योगाद्
विद्युन्निभा काय–कान्तिर्वभासे ।

केश कलाप में ही केवल छिद्रत्व कुटिलत्वका व्यवहारहोता है ।।।।१३

यह नन्दीश्वर पर्वत के निकट में श्रीहरिप्रिय प्रकाण्ड सानुदेश (समतल भूमि)युक्त एक पुरी उक्त प्रकार से ही शोभित है, उक्त पुरी श्रीसरस्वती द्वारा सेवित एवं श्रेष्ठ श्रेष्ठ वीरगण उसमें अवस्थान करते हैं ? उक्तपुरीमें ही श्रीवृषभानु महाराज निवासकरतेथे ।।१४।।

इति चतुर्थ वृष्टिः ।।४।।

पञ्चमी वृष्टिः

इस प्रकार पद्मपलाश लोचन श्रीमान् कृष्ण श्रीनन्दके शरीर में आविर्भूत होगये एवंश्रीवसुदेवके शरीर में भी प्रविष्ट होगये । नन्द एवं एवं वसुदेव वैद्यदीक्षावलम्बन से यशोदा देवकी नामक पत्नीद्वय को उनको अर्पण करने से वे दोनों ने उनको पाकर हृदय में धारणकिया ।१

सङ्घं सतां मोदयन्तीसमन्ताद्
वृन्दं द्विषांतापयन्तीसमासीत् ॥२
प्रादुर्भावंभजमानेमुकुन्दे
वादित्राणिस्वयमेवप्रणेदुः ।
संफुल्लाऽभूद्वनराजीसमन्तात्
सार्द्धं चित्तैर्द्विजभक्त–व्रजानाम् ॥३ ॥
नभस्यभासि पाद्मभेऽसिताष्टमी–निशार्द्धके
व्रजेश्वरी सदुर्गकं हरिं सुखादजीजनत् ।
असूत देवकी चतं तदैव केवलं मुदा
वभूव मोद-सञ्चयः सतां विशुद्धचेतसाम् ॥४
दृष्ट्वा पुत्रं वसुदेवः परेशं हृष्टः प्रादादयुतंगाः हृदैव ।

दैवसे यशोदादेवकीके गर्भलक्षणप्रकाशितहोने परउनदोनोंकी अङ्गकान्ति विद्युतकीभाँतिसमुज्ज्वलहुई । इससेसज्जनगणअतिशय आनन्दितहुए एवंशत्रुयोंकेहृदयमेंसन्तापउपस्थितहुआ ॥ २ ॥

मुकुन्द के आविर्भाव के समय वाद्य समूह स्वयं ध्वनित होने लगे, वनराजि फुल फल से सुसज्जित हुआ । सर्वत्र ब्राह्मण तथा भक्त जनों के चित्त में प्रसन्नता छागई ॥ ३॥

भाद्र मास की कृष्णाष्टमी तिथि में रोहिणी नक्षत्र में अर्द्ध-रात्रि में व्रजेश्वरी यशोदा से दुर्गा (एकानंशा) तथा श्रीहरि आविर्भूत हुए । देवकी से भी उस समय केवल श्रीहरि आविर्भूत हुए । उससमय विशुद्धचित्त साधुगणके चित्त आनन्दसे आप्लुत हो गये ।४

वसुदेवने निजपुत्र परमेश्वर केरूपको देखकर आनन्दसे मनही मन अयुतधेनुका दानकिया एवं कंसके भयसे सत्त्वरही उसप्रवीर

कंसाद्भीतो व्रजराजस्यगेहं निन्येभ्रातु
स्त्वरित तं प्रवीरम् ॥ ५ ॥
हित्वा तस्मिन्नात्मपुत्रं यशोदा
कन्यांनीत्वा सोऽभ्यदात् कंसराजे ।
ऐक्यं विम्बोरर्भयो र्वा तदाभूद्
एकानंशाऽचिन्त्यशक्तिर्यतोऽसौ ॥६॥
सूतं विदन् परिजन–वक्तृतो हरिं
परिप्लुतः परिहित–वेशभूषणः
अचीकरन् निजतनयस्य जातकं
द्विजोत्तमैः श्रुत–विधिना व्रजाधिपः ॥७॥
पुत्रोत्सवे संप्रददौ सनन्दो
हर्षादितो-भूपतिरत्युदारः ।

(महावलशाली)पुत्रको निजभ्राता व्रजराजकेघरको लेगया ॥ ५ ॥

आपने व्रजराज के महल में निज पुत्र को रखकर यशोदा-कन्या एकानंशाको लेआया और कंसराज को समर्पण करदिया । तव उक्त प्रभुयुगल (वालक युगल) एक हो गये, कारण उक्त एकानंशा देवी अनन्त–शक्तिमयी हैं ॥ ६ ॥

परिजनके मुख से श्री हरि के पुत्ररूप में अवतीर्ण होने का संवाद को व्रजपति नन्द महाराज सुनकर आनन्द से समयोचित वेष भूषादि धारण कर उत्तमोत्तम व्राह्मण द्वारा वेद के विधानानुसार निज पुत्र के जात कर्म्मादि समापन किया ॥ ७ ॥

अति उदार इस पुत्रोत्सव—उपलक्ष्य में श्रद्धाएवं आनन्द के साथ व्राह्मणगण को दो नियुत स्वर्णालङ्कारादि भूषित सवत्स धेनुयों

स्वलङ्कृता वत्सयुताश्चधेनूः
श्रद्धान्वितो द्वेनियुते द्विजेभ्यः ॥८॥
सप्तप्रासाद् ब्राह्मणेभ्य स्तिलाद्रीन्
रौक्मैश्चैलै रत्नवृन्दैश्चजुष्टान् ।
जातः सर्वेस्तत्रचित्रो व्रजेऽसौ
गावः सर्वा मण्डिताङ्गा वभूवुः ॥९॥
सोमाङ्गल्यं भूसुरा स्तत्रपेठुः
सूता स्तद्वन्मागधावन्दिनश्च ।
वादित्राणि स्फोतमाशु प्रणेदु
र्गीतिं नृत्यञ्चातिचित्रं दिदीपे ॥१०॥
सुतममितगुणं निशम्यगोपा
व्रजनृपतेर्मुदिताः सुरम्यवेशाः

का दान किया ॥ ८ ॥

अपने सुवर्णयुक्तवस्त्र तथा रत्नराजिसमन्वित सातितिलपर्वत ब्राह्मणगणको दानकिया उससमयसवकुछही विचित्रहुआथा -सकल धेनुहीअलङ्कृतहोगई ॥९॥

ब्राह्मणगण सुमङ्गल वेदपाठ करने लगे सूत, मागध, एवं वन्दि गण भी उस प्रकार स्तोत्रादि पाठ करने लगे, सत्वर वाद्य यन्त्रादि ध्वनित हुये,-अति विचित्र नृत्य गीतादिका अनुष्ठानभी होने लगा ।१०

अपरिमित गुण गरिम शाली पुत्र व्रजराज के घर में आविर्भूत हुआ है, यह सुनकर गोपगण आनन्द से अति रमणीय वेश एवं भूषणादि धारण कर अतिशययत्न के साथ उपहार लेकर व्रजराज के महल में आगये ॥ ११ ॥

धृत–मणिमय–भूषणाःसुयत्नाः
सदनमथवलिपाणयः समीयुः ॥ ११॥
व्रजपुरवनिता विचित्रवेशा
वरमणि-कुण्डल--नूपुरोरुहाराः ।
तमुपाययु रुपायनाग्रहस्ता
नृपनिलयं हरिमीक्षितुं प्रहर्षात् ॥१२॥
घृत--दधि--रजनी--रसान् किरन्तीः
व्रजनिलया जयघोष--भूषितास्याः ।
विधिशिव--सनकादयश्च तस्मिन्
परिननृतु नृंपचत्वरेऽतिमत्ताः ॥१३॥
व्रजपतिरथ--भूषणैरनर्घ्यैं
र्वसनचयैर्वरसौरभैश्चबन्धुन् ।

व्रज पुर वनितागण ने भी विचित्र वेश धारण किया, उत्तम उत्तम मणि कुण्डल, नूपुर, अनेकानेक हारादि धारण कर हस्त में उपढौकन समूह लेकर उक्त हरि को देखने के लिए आनन्द से राज भवन वे सव आगई ॥ १२ ॥

समग्र व्रजवासीगण ही उस समय घर घरमें घृत दधि एवं हरिद्रा जल सिञ्चन करते करते जय जय ध्वनि करते लगे; उक्त व्रजराज के प्राङ्गण में ब्रह्मा, शिव, सनकादि भी अति आनन्द मत्त होकर इधर उधर नाचने लगे ॥ १३ ॥

उससमय व्रजराज बन्धुगणको एवं उनके परिजनगणको महामूल्यवसन् भूषणादि अत्युत्कृष्टगन्धादि समर्पणपूर्वक आनन्दप्रदान कर रहेथे; एवं आनन्दचित्तसे सवको समादर ज्ञापन कररहे थे ।१४ ॥

परिजन--सहितानपि प्रपूर्णान्
मुदितमनाः सकलानपि समाच्चर्चीत् ।।१४।।
तनयजन्ममहे नृपतिर्वभौ
रचित--कोश--कपाट--विमोचनः ।
प्रतिजगुर्निज वाञ्छित--पूरणं
प्रमद--सम्प्लुति-याचक-सञ्चयः ।।१५।।
परिमितमिव यद्बभूव सौख्यं
व्रजनगरे व्रजभूप-तत्प्रजानां ।
तदपरिमितता मवाप सद्यो
यदवधि तत् परमो जगाम कृष्णः ।।१६।।
श्रीराम श्रीदाम मुख्या वभुर्यें
पूर्वं पश्चादुज्ज्वलाद्याश्च डिम्भाः ।
ज्योतिष्मद्भिर्भ्राजमानो व्रजस्तै
रत्नव्यूहै रत्नसानु र्यथाभूत् ।। १७।।

पुत्र जन्म महोत्सव के अवसरपर राजाने कोषागार का कपाट खोल दिया, उससे आनन्द निमग्न प्रत्येक याचक ही निज निज वांछित वस्तु लाभकर उनकी कीर्त्ति की घोषणा करने लगे ।।१५ ।।

पहले व्रज नगर में व्रजराज एवं उनके प्रजावर्ग के मध्य में जो सुख परिमित रूपमें अनुभूत होता था जव से परमेश्वर कृष्ण का आगमन वहाँपर हुआ तदवधि वह सुख अपरिमित ही हो गया ।।१६।।

श्रीकृष्णाविर्भाव के पहले बलराम एवं श्रीदाम प्रमुख बालक गण एवं तत् पश्चात् उज्ज्वलादि सखागण भी आविर्भूत हुये ।

नन्दादीनां तिष्ठतां गोष्ठभूम्यां
गोविन्दाद्यै रात्मजै र्लक्ष्मवद्भिः ।
नानासम्पत् सेवितानां समेषां
गेहेगेहे सौख्य-पुञ्जोजजृम्भे ॥ १८ ॥
यां नन्द-सूनु र्मनुते पुमर्थः
पुमर्थ भूतोऽपि परः परेशः ।
राधादि रूपादि--गुणैरगाधा
वभूव सा धामनि कीर्त्तिदायाः ॥ १९ ॥
जन्मोत्सवेनैव जगत् सुतृप्तं
यस्याः सुरेशैरपि संस्तुतेन ।
पादाब्ज-लक्ष्माणि निरीक्ष्य नार्य्यो
रमेव कन्येयमिति प्रतीयुः ॥ २० ॥

सुमेरु पर्वत जैसे रत्न समूह से देदीप्यमान होता है तद्रुप व्रजमण्डल भी उक्त उज्ज्वल वालक गण द्वारा महासुषमा मण्डित हो गया ।१७

गोष्ठ में श्रीनन्दादि गोपगण श्री गोविन्द प्रभृति पुत्रादि के साथ वास करने लगे उस समय सभी व्यक्ति नानाविध सम्पत् राशि से परिपूर्ण होगये एवं सर्वत्रही गृह गृहमें महासुखका उदय हुआ ।१८

स्वयं पुरुषार्थ-स्वरूप परम परमेश्वर श्री नन्दनन्दन भी जिन को स्वीय परम पुरुषार्थ मानते हैं; रूपादि गुणों से अलोक-सामान्य वह श्रीराधाभी कीर्त्तिदा के घर में उदय हुई ॥ १९॥

उनके जन्मोत्सव को देवेन्द्र गण भी सम्यक् रूप से प्रशंसा करते हैं उस उत्सव में समस्त जगत् परितृप्त हुआ था नारीगण उनके पाद पद्मके चिह्न समूह दर्शन कर विश्वास किये थे कि यह कन्या

यांवर्णयन्तः कवयोऽपिविभ्यु
श्चन्द्रारविन्दादि निनिन्दुउच्चैः
ध्यानेन यस्या नतिभिश्च शश्वत्
प्रमोदमुच्चै हृदयेषु भेजुः ॥२१॥
कटाक्ष पातादभजन्त यस्या
विभूतयः सर्वविधाः प्रकाशम् ।
गुण–वृजान् वक्तुमधीश्वरोऽपि
शशाक नो नन्द–सुतः समस्तान् ॥२२॥
सख्यस्तु तस्याः समरूपशील–
गुणाः स्वसेवाति– पटुत्वभाजः ।
प्रादुर्बभूवु र्व्रजराजधान्यां
तदैव गोप–प्रवरालयेषु ॥२३॥

इत्यैश्वर्य्य कादम्बिन्यां सपरिकर–भगवज्जन्मोत्सव वर्णनं
पञ्चमी वृष्टिः ॥५॥

निश्चयही लक्ष्मी देवी हैं ।२० ॥

कविगण जिनकी वर्णना में प्रवृत्त होकर चन्द्र–पद्मादि की यथेष्ट निन्दा करते हैं, उनका ध्यान एवं प्रणिपातादि कर हृदय में अतिशय आनन्दानुभव भी करते हैं ॥ २१

उनके कटाक्ष पात होने पर सकल प्रकार विभूति ही प्रकाशित होती है, उन के समस्त गुण राजि की वर्णना करने में स्वयं अधीश्वर श्री नन्दनन्दन भी समर्थ नहीं है ॥२२।

व्रजराजधानी में उत्तम उत्तम गोपगण के घर धरमें उस समय से क्रमशः श्रीराधा की सखीगण भी प्रदुर्भूत होने लगी सव

षष्ठी वृष्टिः

अम्भोज-चक्र-दर-जम्बु-यवार्द्धचन्द्र
मीनाङ्कुश-ध्वज-पविप्रमुखान् व्रजेशौ।
अङ्कान्सुतस्यकरयोःपदयोश्चवीक्ष्य
सोऽयंमहानितिपरांमुदमापतुस्तौ ॥१॥
धृत्वाकूटं काल-कूटञ्च पापा
यासौ धात्री पूतनाहन्तुमागात् ।
तस्यै तुष्टोवेश मात्रात् सडिम्भः
प्रादाद्धात्री -स्थानकं शुद्धिपूर्वम् ॥२॥

सखीगण रूप शील गुण में श्रीराधा के समान एवं उनकी सेवामें सविशेष सुनिपुणा भी हैं ॥ २३ ॥

इति पञ्चमी वृष्टिः ॥ ५ ॥

—❀—

षष्ठी वृष्टिः

—*—

व्रजेश्वर एवं व्रजेश्वरी निज पुत्रके हस्तपदमें पद्म, चक्र-शङ्ख, जम्बु, यव, अर्द्धचन्द्र, मीन अङ्कुश, ध्वजा तथा वज्रादि चिह्न समूह को देखकर शोचने लगे कि—" यह पुत्र निश्चयही कोई महा-पुरुष होगा, इससे उनदोनों का परमानन्द हुआ ॥१॥

कपट पूर्वक धात्री रूपी पापिनी पूतना स्तन में काल कूट विषलेप कर वालक की हत्या करने के लिए आई थी, वह वालक कृष्ण धात्री वेशको देखकर ही तुष्ट होगया और उसको शोधन कर मातृगति प्रदान किया ॥ २ ॥

कपटावृतं शकटासुरं हरि रञ्जसातमखण्डयत् ।
मरुतञ्च तंवलिनं विभु र्वनवासिनां सुखदः शिशुः ॥३॥

यदा यदा मातुरङ्के निविष्टः सचापलं
दिव्यडिम्भो व्यतानीत् ।
तदा तदा मातृवर्गा न्यमांक्षु व्रंजोकसश्चाखिल-
सौख्य सिन्धौ ॥४ ॥
गर्गाचार्य्यादात्मनामानि भेजे
गूढ़ भावं व्यञ्जयन् पूतनारिः ।
तेनेन्वर्थं चोरिका—नर्म्मदेवो
गोपालिभिर्वर्ण्यमानंमुकुन्दः ॥५ ॥
यदाशिशु धूंलि कैलौ रतोऽभून्
महामना स तदा कामुकेभ्यः ।

छलनामय शकटासुर को भी श्रीहरि ने सत्वर खण्ड विखण्डित कर दिया एवं वन वासियों को सुख प्रदाता वह वालक प्रभु महावल मरुत को तृणावर्त्त को भी वध कर दिया ॥ ३ ॥

जव जव माता के अङ्कमें रहकर वह दिव्य वालक चाञ्चल्य प्रकाश करता—तव मातृवर्ग एव निखिल व्रजवासीगण सुख सिन्धु में निमज्जित हो जाते । ४ ॥

निजगूढ़ भावको प्रकटकर वह-पुतनारि कृष्ण गर्गाचार्य्य से निजनामसमूहप्राप्तकिया, अर्थात् श्रीगर्गाचार्यने श्रीकृष्णकानामकरण किया । तत्पश्चात् वहमुकुन्ददेवने गोपीगणकेसाथ चोरी एवं परि हासरसविनोद द्वारा निजनामसमूहका सार्थक किया ॥ ५ ॥

जव वह महामनाः शिशु प्रभु धुली खेल में रत रहते थे तव

दधौ महान् धूलिमुष्टिच्छलेन
प्रभुर्वरानमृतान्तान् मुनिभ्यः ॥६॥
जनकमुपागतः सदसि नन्दनृपं चपलो
धृतवरभूषणो मधुरभाषणोमोदकरः ।
अलिक–लसन्मसीकलितचन्द्रकलः कुतुकी
हरिरखिलान् व्यधादतिचिरं विरमत्करणान् ॥७॥
किङ्किणी–वलय–नूपुर–धारी
निष्क कुण्डलवराङ्गद हारी ।
पीतचीनवसनः सडिम्भः
शिञ्जितैरपि मनांसि जहार ॥८॥
रथशिविकाञ्चितो हरि रभसादुटजेषु यदा
परिचरितुं मुनीन्स्वनिरतान् जननीसहितः ।

आपने प्रार्थी सकल मुनियों को धुलि मुष्टि के छलसे अमृत वरभी प्रदान किया था ॥ ६ ॥

पिता नन्दमहाराज सभा में इस चञ्चल वालक सुन्दर सुन्दर भूषणादि पहन कर मिष्ट मधुर कथासे सव के आनन्द वर्द्धन कर उपस्थित होते थे, उनके ललाट–पटल में कज्ज्वल-रचित अर्द्ध चन्द्रा कृति तिलक शोभित होता, इस प्रकार वह कुतुकी हरिके दर्शन से सकल जन हो अनेक क्षण यावत् निजनिज कार्य विस्मृत हो जाते थे ।७

किङ्किणी' वलय नूपुर धारी वह बालक कानोंमें स्वर्ण कुण्डल वाहु में अङ्गद एवं वक्षस्थल में बहुविध हार धारण किया है, उसके कटि देशमें पीत वर्ण चीन (सूक्ष्म) वस्त्र शोभित है–इस प्रकार भूषणादिकी ध्वनिसे सवजनके मनोहरणकरते थे ॥ ८ ॥

धृतदधि–मोदकादि-वलिकःसवलश्चविभुः
प्रमुदमगु स्तदा सुवहु ते विवुधाश्च पराम् ॥९
बलकृष्णयोः सजग्धौ मुदादमीयां समाददुःफेलां ।
चेलां प्रतीत्यदेवाश्चित्रं शकुन्ताः सुरेश्वरा नित्यं ॥१०
मुष्णान् गव्यं गोपिकानां समित्रः
पुष्णान् कीशान् मुक्तवत्यश्च कृष्णाः
नोपालब्धोऽप्युक्तयाऽपि सधात्र्या
प्रीतिं नीता साभ्यनन्दोत् सुतेन ॥११॥
मृत्सा–प्राशी ज्ञापितः स्वाग्रजेन
क्रोधान्मात्रा भर्त् सितः पूतनारिः ।

मातायशोदा एवं अग्रज बलरामके साथ जबप्रभुहरि रथतथा शिविमें आरोहणकर निजभक्त मुनिगणकी परिचर्य्या करनेकेलिए मुनियों के पर्णकुटीरमें गमन करते थे तब उनके हात में दधि मोद कादि एवं उपहार समूहरहते थे, इसभावमें उनको देखकर मुनिगण एवं देवगण अतिशत आनन्द उपभोगकरते थे ॥ ९ ॥

आश्चर्य्य ! बलदेव एवं कृष्ण जबसहभोजन करतेथे,-तब समय जानकर क्रीड़ापरायण इन्द्रादि देवगण नित्यही पक्षीरूप धारण कर उनदोनों के फेला (अधरामृत) आस्वादन करते थे ॥१०॥

गोवत्स सकल को खोलकर वह कृष्ण सखागणके साथ गोपिकाओं के गव्यादि चोरी करताथा, एवं उससे वानरोंकाप्रति पालन भी करताथा गोपिकागण माता यशोदाके निकट कहनेपर माता कृष्ण को भर्त्सना नहीं करतीथी पुत्रद्वारा परमप्रीतिलाभकर यशोदा आनन्दित ही होती थी ॥ ११ ॥

"कृष्णने मिट्टी खाई" अग्रज बलदेवने यहबात् माता यशोदा

भीतः स्वास्ये विश्वमतेत् प्रदर्श्य
क्रोधं तस्याः श्रंसयन्नभ्यनन्दीत् ॥१२॥
विलोक्यापराधं जनन्या निबद्धो
विभुत्वं स्वकीयं मुदा दर्शयत्ताम् ।
विभज्याज्जुर्नौ तौ च मुक्तौ चकार
स्वयं बद्धमूर्त्ति र्वतासौ मुकुन्दः ॥१३॥
वृन्दाटवो मधिवसन् हरि रम्बुजाक्षः
सञ्चारयन् सखिकुलैः सह तर्णकौघान् ।
वत्सासुर वक मघञ्च जघान सद्यः
शुद्धं व्यधात् कमलजञ्च स जग्धिमुग्धः । १४।
कालियं वत विमर्द्य सनागः सूरजांरचितवान् परिशुद्धां ।

कहनेपर माता क्रोधिताहोकर कृष्णको भर्त्सनाकी। तवपुतनारि कृष्ण भीतहोकर निज मुख मध्यमें समग्र विश्वब्रह्माण्ड को दिखाकर माता का कोप प्रशमन कर आनन्दविस्तार किया ॥ १२॥

अपराध देखकर कृष्णको माता बन्धन करनेपर कृष्णने आनन्द के साथ माता को निज विभुत्व का प्रदर्शन किया एवं यमलाज्जुर्न वृक्षद्वय को गिराकर उन दोनों का बन्धन तो दूर किया किन्तु मुकुन्द स्वयं बद्धमुर्त्ति में (उलुखलबद्ध) ही रहा ॥ २३ ॥

वृन्दावनमें अवस्थान के समय वह पद्मपलाशलोचन हरि सखागण के साथ वत्स चारण किया, एवं वत्सासुर, वकासुर अघासुर प्रभृति को सद्य संहार किया। सहभोजन के समय मनोहर मूर्त्ति वह कृष्ण ब्रह्माको भी शुद्ध किया ॥ १४ ।

कालिय नाग को विमर्दन पूर्वक यमुना को विषमुक्त किया एवं

निर्विवार खलु गोकुलभाजां भावमद्भुत मुदार मुदीक्ष्य ।१५

दीव्यन् द्वन्द्वीभावतोऽहर् प्रलम्बं
देवारातिं धेनुक-द्वेषिणा यः ।
मुञ्जाटव्यां दाववह्निं निपीय
व्यक्तीचक्रे साधुसौहार्दमीशः ॥१६॥

गोपकुमारी–वसन निकायं
स्कन्धे निदधौ सखलु विमाथं ।
वीक्षित सकल कलेवर शोभः
सूचित–शुद्ध–जनामित्र लोभः ॥ १७॥

स्तोत्रयतसु नच यस्य कटाक्षः
सनतेष्वपिभवेद्विवुधेषु ।
संस्तुवन् व्रजभुव स्तरु संघान्
सस्वजेऽतिमुदितः स भुजाभ्यां ॥१८ ॥

गोकुल वासि गणको दर्शनदेकर उन सव के अद्भुत उदार भाव (विस्म यादि) को निवारण किया ॥ १५॥

मल्लक्रीड़ा करतेकरते बलदेवने देवशत्रु प्रलम्बासुरको निधन किया एवं श्रीकृष्ण गुञ्जाटवीमें दावानल पानकर व्रजवासियों के प्रति निज सौहार्द्य को उत्तम रूपसे प्रकाश किया ॥१६॥

कृष्णने गोपिका गण के वसन समूह को धारण अकपट से स्कन्ध में किया एवं उस सव के सर्वाङ्ग शोभा सन्दर्शन पूर्वक शुद्ध भक्त (गोपी) गोपियोंके असीम लोभ की सूचना की ॥१७॥

संयत स्तोत्र परायण देवगण के प्रति भी जिनका कटाक्ष पात कभी भी नही होती वह हरि अद्य निज वाहुयुगल द्वारा अति आनन्द

भुक्त्वान्नानि ब्राह्मणीनां मुकुन्दः
प्रादात्ताभ्यः स्वाङ्घ्रिलाभं वरंसः
संस्काराद्यात् हेलयन्नात्म भक्तेः
श्रद्धामेव ख्यापयामास हेतुं ॥ १६ ॥
कैशोरे वयसि हरि र्धरं सा दध्रे
गर्विष्टं त्रिदशपतिं जिगाय शक्रम् ।
उद्द्रावं व्रजवनिता-मनांसि यस्मात्
संप्रापु र्मदन कुलानिवाग्नि- पुञ्जात् ॥ २०॥
गान्धर्वो विधि रभवद् व्रजाङ्गनानां
दाम्पत्यै व्रजविधुना सखाखिलानां ।
गीर्वाण्यः कुसुम किरो जगुर्विचित्रं
नृत्यन्त्यो ध्वनित मृदङ्गिकाः प्रहर्षात् ॥२१॥

भरसे व्रजभूमिके तरुसमूहको स्तव करते करते आलिङ्गन कर रहें हैं।

मुकुन्द यज्ञपत्नी ब्राह्मणीयों के अन्न भोजनकर उनसव को निज पादपद्मलाभरूप वर प्रदान किए थे एवं इससे निज भक्ति के निकट संस्कारादिकी अवहेलाकर श्रद्धाका परमोत्कर्ष ख्यापनहुआ १६

कैशोर वयसमेंहरि गोवर्द्धनधारण पूर्वक अहङ्कृत देवराज इन्द्र को पराजित किया। अग्निराशी से लोक निज प्रकार सन्ताप ही प्राप्त होते हैं तद्रुप श्रीकृष्ण-दर्शन से व्रजवनिताओं के मन में (काममय) उत्ताप ही उत्पादित हुआ था ॥२०॥

व्रजचन्द्रमा श्रीकृष्णकेसाथ सकल व्रजाङ्गनाके गान्धर्वविधान से विवाह हुआ। देवीगण कुसुम वर्षणकेसाथ गान करने लगीं एवं आनन्दभरसे मृदङ्ग ध्वनिके साथ विचित्रनृत्य करनेमें प्रवृत्त होगईं २१

विधिं स्तावकं भावकं चन्द्रचूड़
लतो निर्जरान् किङ्करानिन्द्र मुख्यान् ।
हरेर्नन्दसूनो रमन्यन्त गोपा
स्तृणेभ्यो ऽसुरान् कंस-पक्षाश्रितांस्ते ॥२२॥

श्रीकान्तं प्रणतैक बन्धुमतसी पुष्पप्रभं चिद्घनं
चन्द्रास्यं कमलेक्षणं मलयजालिप्तं लसद्-भूषणं ।
चित्रोष्णीष मुदार-गौर वसनं कृष्णं सुरेन्द्रार्च्चितं
वीक्ष्य स्वानुगमुद् ययुः परमिकां प्रीतिं वृजस्था भृशं ॥२३

अथ वृजपति रुदीक्ष्य सद्गुणै र्वरं
हरिं विनयिन मात्मजं मुदा ।
शुभक्षणे शुभविधिना वृजावने
रजीगमत् किल युवराजतामसौ ॥२४॥

उस समय श्री नन्दनन्दन के सखागोपगण ब्रह्मा को स्तावक (स्तवकारी) मात्र शिवको भावक (भाव-प्रवण) इन्द्र—प्रमुख देव गण को भृत्यवत् एवं कंसपक्षीय असुरगण कोतृणवत् समझते थे ।२२

लक्ष्मी कान्त कृष्ण प्रणत जनगण के एकमात्र बन्धु, अतसीपुष्प के समान अङ्गकान्ति, चन्द्रवदन, चिद्घन पद्मपलाशलोचन हरि उनके कलेवर चन्दनसे चर्च्चित अङ्गमें उत्तमउत्तम वसन, मस्तकमें विचित्र उष्णीष, परिधान में पीत वसन, व्रजवासीगण इन्द्रद्वारा अर्च्चनीय स परिकर श्रीकृष्ण को देखकर नित्य ही परम प्रीति लाभ करतेथे ॥२३

जिस समय श्रीव्रजराज नन्दमहाराज ने अनुभव किया कि स्वीय पुत्र सद्गुण मण्डित एवं विनयी हुआ है, तब आनन्दभरसे शुभ क्षणमें शुमविधि के अनुसार श्रीकृष्ण को व्रजमण्डल के युवराजत्व

बलमद्रञ्च चकार भौमिकं व्रजभूमै हरि मन्त्रिणञ्चतं ।
सदनं तस्य सुचारु निर्ममे सुखसिन्धौर्निखिलान्निममज्जयन् ॥
आदिदेश निजशिल्पिकुमारं बुद्धिसागरमपारवलं सः ।
सौधमद्भुततमं रचय त्वं येन रज्यति हरिस्तव मित्रम् ॥२६
पुरुकान्ति-वलीक-जालरम्यं वरवेदी-गृहसन्धिलाञ्छितंसः ।
वलिताश्रय मम्बुयन्त्रराजि व्रजचन्द्रस्य चकार सद्मसद्यः ॥२७
मणिवद्धतटैः स्फुटत् सरोजैः शुशुभेयद्विमलाम्बुभिःसरोभिः ।
अलिगुञ्जित-मञ्जुभिश्चतुर्भिः,
स्फुट प्रकरैः सुनिष्कुटैश्च ॥ २८ ॥

प्रदान किया ॥ २४ ॥

आपने बलदेव को भूम्यधिकारी एवं श्रीहरिके मन्त्री नियुक्त किया, उनके लिए एक सुचारु भवन भी निर्म्माण करवाकर निखिल व्रजवासी को ही सुख सागर में निमज्जित किया ॥ २५ ॥

श्रीनन्दमहाराजने अमितबलशाली बुद्धिसागर निज शिल्पि कुमार को आदेश किया कि जिससे तुम्हारे मित्र श्रीहरि आनन्द से रहसके ऐसे एक अद्भुततम अट्टालिका निर्माण कर दो ॥ २६ ॥

उत शिल्पि कुमारने आदेशानुसार तत्क्षणात् गोकुल चन्द्रमा केलिए सातिशय दीप्ति विशिष्ट चन्द्रशालिका एवं गवाक्षयुक्त, उत्तम वेदी, गृहसंधि (देहली) प्रभृतिसमायुक्त आधार (खूँटि) एवं जल-यन्त्रादि-विराजित एक अपूर्व अट्टालिका कानिर्म्माण करदिया ।२७॥

उक्त प्रासाद के चारो ओर चार निर्म्मल जलपूर्ण सरोवर थे, उसके तटदेश मणि माणिक्य के द्वारा रचित था, निर्मल जल में राशि राशि पद्म प्रस्फुटित होते थे; मधुकरके गुन्जन से उक्तस्थल अतिशय

सच रचयाञ्चकार गिरिसानुषु भूरिविधान्
मणिनिलयां स्तथैव सुरशिल्पि–मनोहरणान् ।
सपदि सवै स्तुतोष रसिकः खलु तत्र मुदा
सह मनसा ददौ समणिभूषण-चेल सञ्चयान् ।२६

स्मित वीक्षण–विद्धचेतसा,
वरसौन्दर्य्य सुधा–सुधामनी ।
स्वजनैः सह राधिकाच्युतैः
स्फुरत स्तेषु सदैव मेदुरौ ॥३०॥

व्रजनृपति जंगाम सयदा, सहदार कुमार पार्षदो
रथ शिविका हयैः सुरुचिरं, वृंषभानु पुरं निमन्त्रितः ।
सुमणिधरः सतुर्य्यनिनदो, वरचामर सेवितो
द्युति मतुलां विलोक्य,दिविषन्निकरोऽपि तदा विसिस्मिये ॥

मनोरम हो उठा था । उत्तमोत्तम उपवन राजिमेंभी नाना विध सुन्दर सुन्दर पुष्पराजि विकसित होते थे ॥ २८ ॥

अपरन्तु शिल्पीनेउक्त पर्वत के सानुदेश में सत्वर ही देव शिल्पी विश्व कर्माका मनोमुग्धकर वहुविध मणि मय गृह की रचना की–रसिकशेखर कृष्ण वह देखकर सन्तुष्ट होगये एवं आनन्दातिशय्य सें अन्तरसे शिल्पी को मणि भूषण सह वस्त्रादि प्रदान किये ॥२६॥

उक्त गृह समूह में मृदुमधुर हास्य शोभित अवलीकन से परस्पर विद्धचित्त होकर उत्तमोत्तम सौन्दर्य्य माधुर्य्यामृतके आधार स्वरूप श्रीराधाकृष्ण–परिजनगण के साथ सर्वदाही स्निग्ध चित्त से विहार करते थे ॥ ३० ॥

सुन्दर सुन्दर मणिमय भूषणादि धारण पूर्वक व्रजराजनन्द

अधिगत्य भानु नृपति र्व्रजेश्वरं,
भवनं निनाय रचितार्च्चन क्रमः ।
परिभोज्यतं वहुविधान् रसान् प्रभुः,
सह–पार्षदः प्रमुदितो वभूव सः ।३२।
सखिवृन्दै र्निखिलः समुज्जिहान,
मधुरा सेचनकं विलोक्य कृष्णं ।
जनता तत्र सुखाम्बुधौ न्यमज्जत्,
पुरुभावास्तु विशेषत स्तरुण्यः ॥३३॥
पिवतोरपि सुस्मिता मृतानि,
रतितृष्णकुलयोरधिस्नुयुनोः

जिस समय वृषभानुनगरमें निमन्त्रित होकर स्त्री पुत्र, पार्षदगण सह सुचारु रथ शिविका अथवा अश्वादि यान द्वारा गमन करतेथे तव वाद्ययन्त्रादि निनादित होतेथे-उत्तमोत्तम चामर द्वारा आपवीजितहोते थे। तत्कालीन अतुलनीय ज्योति दर्शनसे देवगण भी विस्मित होतेथे।३१

वृषभानु महाराज निजनगर में व्रजेश्वरको पाकर यथा विहित अर्च्चना (सत्कार) द्वारा निजमन्दिर में ले आये। वहाँपर पार्षदगण के साथ उनको वहुविध रसान्न द्रव्यानि भोजन कराकर वृषभानुराजा महानन्द भोगकरतेथे ॥ ३२ ॥

निखिल सखा मण्डली मण्डित मधुर कृष्णको दर्शन कर किसी कीभी तृप्तिका अन्त नही होता था–सुतरां जन मण्डली सुख समूद्रमें निमज्जित हो जातेथे, विशेषतः नारीवर्गमें वहुविध भावोद्गमहोताथा

परस्पर सुन्दर मृदुमधुर हास्यामृतपानकरने परभी किन्तु सानु देश स्थित विद्युत् मेघकान्ति वह युगल-किशोर जैसे सुरत तृष्णा व्याकुल होकरही वहाँपर नीलपद्माभा कटाक्ष-वृष्टिकी सृष्टिकरते थे३४

समुदैदसिताम्बुज च्छदाभा,
तडिदभ्र-प्रभयोः कटाक्ष वृष्टिः ॥३४॥
अथो भानुभूपो वरै र्मण्डनाद्यैः
समर्च्य व्रजाधारवरं सानुगं सः।
अनुव्रज्य तं सानुग स्तद् विसृष्टः
स्वकंकृच्छ्रतो मञ्जु भेजे निकुञ्जम् ॥३५॥
तदा सारविन्दा जनन्या स-वृन्दा,
समाराधि, सा राधिका भूषणाद्यैः।
हरेः प्रेमपात्री यदा राज पुत्री,
व्रजक्षेमधात्रीप्रयातु सहैच्छत् ॥३६॥
शिविकाश्च रथाश्च रुक्मचेलैः
पिहिता जालिभि रभ्रकाचकैश्च।

अनन्तर वृषभानु महाराज उत्तमोत्तम भूषणादि द्वारा सपरिकर व्रजाधीश्वर की सम्यक् प्रकारसे अर्च्चना किये एवं स्वयं सपरिकर उनके अनुगमन किये-नन्द महाराज उनको विदाकरने पर आप अति विषण्णताके साथ मनोरम प्रासादमें प्रत्यावर्त्तन किये ॥३५॥

व्रजमङ्गल दायिनी हरि प्रेमपात्री श्रीराधिका उससमय जब उनसबके साथ गमन करनेकी इच्छाकरतीथी, उससमय ललितादि सबसखी वृन्द उनके साथ रहतींथीं-हस्तमें एक लीलापद्म रहता था मा कीर्त्तिदा उससमय उनकोविविधभूषणादि द्वारासज्जितकरदेती थी।

वहुविध उज्ज्वल भूषणादिद्वारा उद्भासित शिविकाएवं रथ समूह स्वर्ण खचित वस्त्रादिद्वारा एवं चिद्युक्त अभ्रकाचादिद्वारा यथा क्रम से आवृत्तहोकर उससमय राजप्राङ्गणमें उपस्थित होती थी।३७

तदुपाययु रुज्जलै, र्ललामै,
र्वहुभासो नृपचत्वरं तदानीम् ॥३७॥
बलैरुद्धतानां किशोरी-वृतानां,
लसद् यौवनानां रणद् भूषणानां ।
तदा गुज्जरीणां तति र्वाग्मिनीनां,
मुदायान सम्बाहनार्थाध्यतिष्ठत् ॥३८॥
समारूढ़याना बलद् भूरिगानाः
शनै र्वीज्यमाना वरैश्चामराद्यैः ।
प्रियानन्दसूनोः परेशस्यवध्व
स्ततो निर्ययुः सुभ्रुवो राधिकाद्याः ॥३९॥
वभौ काम्ववो भैरिकं सौषिराऽपि
ध्वनि र्मङ्गलो राज पुत्र्याः प्रयाणे, ।
लसत् स्वर्ण वेत्रासि चापेषु हस्ता
दधावुः पुरः पार्श्वतोऽपि प्रवीराः ॥४०॥

अति बलवती किशोरीगण द्वारा परिवेष्टिता, यौवन सम्पन्ना एवं शब्दायमान भूषणा वावदूक गुजरी नारीगण आनन्दकेसाथ यान वहनकरने केलिए वहाँपर उपस्थित हुई ॥३८ ॥

अनन्तर यान में आरोहण कर वहविध गान करतेकरते परमेश्वर नन्दनन्दन की प्रेयसी राधिकादि सुन्दरीगण उत्तम उत्तम चामरादि द्वारामृदु मधुरभावसे चामरोंसे वीजित होकर गृहसे वहिर्गत हुई ।

उक्त राजकुमारी की यात्रा प्रसङ्गमें उससमय शङ्ख भेरि वंशी प्रभृतिकी मङ्गल ध्वनि समुत्थित हुई, शोभमान स्वर्णवेत्र असि वाण

ववौ मन्दमन्दन्तदा गन्धवाहो
दधारातपत्रं महद्वारिदोऽपि ।
वितेनुर्वरं नृत्यगीतञ्चदेव्यो,
मृदङ्गादि-नादं नुतिञ्चाति चित्रम् ॥४१॥

फणि फक्किकामिव वीक्ष्य तां सकुण्डलनांपुरीं ।
द्युलतामिवाखिलदां नुतां प्रमदा हरेः प्रमुदंद्धुः ॥४२॥

अवतीर्य्यतामणियानतः,
परितोष्य सार्थिक सञ्चयान् ।
प्रणिपत्य गोकुल-भूमिपां,
जगृहुस्ततो वरवीटिकाः, ॥४३॥

एवं धनुष हात में लेकर उत्तमोत्तम वीरगण सम्मुख एवं पार्श्वद्वयमें धावित हुये ॥४०॥

उस समय समीरण मृदुमन्द गति से प्रवाहित हुये-मेघोंने महा छत्र धारणकिया देवीगण उत्तम नृत्यगीत मृदङ्गादि वाद्य अतिविचित्र स्तुति करनेमें प्रवृत्तहुई !॥४१ ॥

पतञ्जलि महाभाष्यके दुर्वोध्य स्थलमेंजिस प्रकार कुण्डल वेष्टन हैं उसी प्रकार नन्दीश्वर पुरीको दुर्गम परिखाद्वारा वेष्टित अथचस्तुति मात्रसेही कल्पलता कीभाँति अखिल अभीष्ट प्रदान कारी देखकर हरि प्रेयसी गण परमानन्द लाभकिये ॥४२ ॥

वे सब मणिमय यान से अवतरण कर सकल वाहकको सन्तुष्ट किये एवं गोकुलाधीश्वरी (मायशोदाको) प्रणामकर उत्तम ताम्बूलादि उनसे ग्रहण किया ॥ ४३ ॥

अनन्तर पद्मपलाश नयना गोपीगण निज निज भूषणध्वनिसे

अथशिञ्जितामृत--बन्दित--
प्रियमानसाः स्वगृहान् गताः ।
कृतमज्जनाः कमलेक्षणाः
प्रिय कर्मतत् प्रतिपेदिरे ॥४४॥
सम्पालयन्नैचिकीनां कदम्वं,
लम्पाकिमं भावमेणी दृशां सः
कम्पाकुलः सन्दधे दीप्तकीर्त्ति
र्लम्पाकहृत् सुन्दरो नन्द सुनुः ॥४५॥
तात मम्बु पतिनापनीतं वन्दितो विरचीताच्चर्चनइशः
आनिनाय भवनं पुरु तेजा, मोदयन् व्रजभुवंवभासे ॥४६॥
वृन्दारण्य चन्दिका-वृन्द्र रम्यं,
पश्यन् वंशी वदायामास कृष्णः ।

प्रियतम के मनमें रसातिशय्य का विस्तार कर स्नान करती एवं निज निज गृहमें प्रत्यावर्त्तन कर प्रियतमके उद्देश्य कार्य विशेषमें मनो-निवेश किये ॥ ४४॥

दूसरे और लम्पट हृदय उज्ज्वल-कीर्त्ति सुन्दर नन्दनन्दनभी उत्तमा गोगणको सम्मालन कर कम्पित कलेबरद्वारा हरिण लोचन श्रीराधाका रूढ़ भावको उद्धीपित किये ॥ ४५ ॥

पित्रा नन्दमहाराज का अपहरण वरुणदेवने करलेने से महा तेजस्वी ईश्वर वहाँपर उपस्थितहोगये एवंउनसे अच्चित होकर पिता को साथलेकर धरमें प्रत्यावर्त्तन कर व्रजमण्डल को आनन्दित किए ॥

वृन्दावन उज्ज्वल चन्द्रालोकसे उद्भासित होगया हैं,देखकर श्रीकृष्णने वंशी वादन किया उससमय वहाँपर गोपीगण उपस्थित होने

आयाताभि स्तत्र गोपाङ्गनाभि-
र्दीव्यन्तीभि र्मण्डितो ऽसौ बभूव ॥४७॥
माधव्यस्ता मञ्जुतौर्य्य त्रिकाद्यै,
र्मञ्जुरूपैश्च कृष्णां ।
प्रेम्नानर्च्चुः सार्थिकासौचकाशे,
अनन्तानन्दाख्यायिनी वाक् तदैव ॥४८॥
वीणा-वेणु-मृदङ्ग-नूपुर-लसत् काञ्च्यादिनादैरभूत्
ताताथै ततथैश्च ताल मिलितै र्नृत्यैश्च गीतैश्च यत् ।
चित्रैः पाणि विधूननै स्तनुमणि द्योतैश्च रासाङ्गने
तद्वक्तुं प्रभवते कथं सुखमहो वाग्देवतापिस्वयम् ॥४९॥
कुण्डलित्वमनयत् सुदर्शनं, कुण्डलित्वमपहायन् विभुः ।

पर उनसव केसाथ क्रीड़ा करतेकरते उनसवके द्वाराकृष्णमण्डित हो गये थे ॥४७॥

मनोज्ञ नृत्यगीत वाद्यादिके साथ मनोज्ञ स्पर्श एवंमनोमदरूप के द्वारा माधवीगणने कृष्णकी प्रेमभरसे अर्च्चनाकी उसीसमय अनन्त आनन्द वाचक वाक्य (सत्यंज्ञानं अनन्त ब्रह्म यहवेदवाक्य) सार्थक होकर प्रकाशित हुआथा ॥४८॥

अहो ! रासाङ्गन में वीणा मृदङ्ग नूपुर एवं शोभमान काञ्ची प्रभृति के निनाद से ता, ता, थै, तत थै प्रभृति ताल केसाथ मिलित नृत्यगीतसे विचित्र हस्त कम्पन से (हस्तकंनृत्यसे) देह रत्नके (देह एवं आभरण के) प्रकार से जो व्यापार-परम्परा संघटित हुई थी उसका वर्णन सुख पूर्वक करनेमें स्वयं वाग्देवता सरस्वती भी क्या सक्षम होगी ! ॥ ४९ ॥

शङ्खचूड़मपि तं स्वमन्तकं प्रापयन्नुदहरन् स्यमन्तकम् ।५०।
　　वृज वनिता वनान्तनिरतं हरि मम्बुद सोदरं यदा
　　विरह धुताः पुराण पुरुषं जगु रम्बुज लोचनाश्चिरं ।
　　भुवनतलं तदेदमखिलं सरिदुष्ण-सुखाम्बु-सङ्कुला
　　दुरधिगमा समाधि-निलयै रपि हंस कुलैः सभाददे ।५१
वृजविपिने विचित्र विहगो हरिवेणु रवो यदा बभौ-
विधि शिव शक्र-तुम्बुरु मुखा विबुधोऽपि दधु विचित्रतां ।
प्रकृति-विपर्य्ययन्तु सरितो गिरयश्च ययु मिथ स्तदा
वृजमहिलास्तु भेजु रखिला श्चलता-सरसीषुमज्जनम् ।५२।
जातोऽरिष्टः कष्टकासारवासी, यस्मात् केशी मृत्युवेशी बभूव

प्रभु कृष्ण सुदर्शन नामके विद्याधर का सर्पत्व दूर कर उस को पुनर्वार कुण्डलीत्व (कुण्डलीधारी विद्याधरदेह प्रदान किए। एवं शङ्खचूड़ को वध कर उसकी स्यमन्तक मणि ले आये ॥ ५० ॥

घनश्यामल पुराणपुरूष हरि जिससमय बहुक्षण पर्यन्त वनमें छिप कर थे-उससमय पद्मपत्र नेत्रा विरहमग्ना व्रजबालगाण कृष्ण कीर्त्तन करने लगी-उससे निखिल भुवन (दुःखमय उष्ण एवं सुखमय शीतल) जलसे पूर्ण दुरधिगभ्म नदीस्वरूप प्राप्तहुआएवं समाधिमग्न हंस (परमहंस) गणभी उसमें गिरगये ॥ ५१ ॥

विचित्र विहग सङ्कुल व्रजवनमें जब श्रीहरिकी वेणु ध्वनि उत्थित हुई-तब ब्रह्मा शिव इन्द्र तुम्बुरु प्रमुख देवतागण भी विस्मित होगये-नदीएवं पर्वत गणके परस्पर प्रकृति-विपर्यय हुआ एवं व्रजाङ्गनागण चाञ्चल्य सरोवरमें निमज्जित होगईं ॥ ५२ ॥

जिनसे अरिष्टासुर कष्टरूप जलाशय वासी (महाकष्टमेंनिपतित

व्योमः प्राप व्योमतामेव सद्यः,
सोऽयं कृष्णोदेववृन्दै र्ववन्दे ॥ ५३ ॥
हरिरथ मथुरां गतः स कंसं
प्रणिहतवान् वृजिनं जहार पित्रोः ।
यदुनृपमकृताहुकिं परेशः
सपदि कुशस्थलिकामधिष्ठितोऽभूत् ॥५४॥
कुरुपति–तनयान् निहत्य दुष्टान्
व्यधित पतिं निखिलस्य धर्मपुत्रम् ।
क्षतखलनिचयो विवेश गोष्ठं
सफलमिदं कृतवानसौ तु माभ्यां ॥५५॥

इत्यैश्वर्य्य–कादम्बिन्यां भगवद्बाल्यादि–
क्रमलीलावर्णनं षष्ठी वृष्टिः ॥ ६ ॥

सप्तमी वृष्टिः

शीघ्रगैः प्रति निवेदिते हरौ,
दुन्दुभिः किलजगर्ज्जमुस्वनं ।

तित)हुआ केशीने मृत्य को वरणकिया, व्योमासुर भी सद्य ही व्योमत्व (शून्यत्व) प्राप्त हुआ उन कृष्ण की वन्दना देवगणोंने की ।५३।

अनन्तर हरिने मथुराजाकर कंसको मारा–पितामाता का दुःख नाश किया, आहुकिको (आहुक पुत्रउग्रसेनको यदुराज बनाकर स्वयं हरिकुशस्थली को शीघ्रचले गये ॥ ५४ ॥

तत्पश्चात् दुष्ट कौरवगणको वधकर धर्मपुत्र युधिष्ठिरको सार्व भोम नरपति किया समस्त दुष्टअसुरादि को विनष्ट कर गोष्ठमें प्रवेश किया इसव्रजमें मासद्वय काल अवस्थित होकर इसव्रजकोसफलवनाया

इति षष्ठ वृष्टिः ॥६॥

मङ्गलध्वनि रभूद् गृहे गृहे,
काननानि दधिरे मधुस्रुतिं ॥१॥
उदिते विधौ प्रमुदं दधे।
व्रजभूरसौ जलधि र्यथा ॥२॥
समुपागते वत माधवे।
अटवीव सागमदेत–तां ॥३॥
परिषस्वजिरे हरिं मुदा, निजभावे र्निखिला व्रजौकसः
स्रवदस्रपरीत-वक्षसो, वरनीप–स्तवक–प्रभोज्ज्वलाः ॥४॥
तत्रागता स्ते मुनयो वनस्था,
द्रष्टुं हरिं संयमिनो वनस्थाः।
संपूजिता स्तेन धृतात्मभावा,
स्तं तुष्टुवुः संस्फुरदात्मभावाः ॥५॥

सप्तमी वृष्टिः

शीघ्रगामी दूतगण के मुख से श्रीहरि का व्रजागमन संवाद प्राप्त होने पर उस समय उच्चैःस्वर से दुन्दुभि–ध्वनि होने लगी-व्रजके घरघरमें मङ्गलध्वनि उत्थित होने लगी-वनराजिभी मधुधारावर्षण करनेलगे।

चन्द्रोदयसे जिस प्रकार समुद्र आनन्दभरसे स्फीत होते हैं,तद्रुप श्रीकृष्णके आगमनसे भी व्रजभूमि समुत्फुल्ल हुई ॥२॥

वसन्तके आगमनसे वन प्रदेश जैस विचित्रवर्ण प्राप्तहोताहै,उस प्रकार श्रीमाधवके आगमनसेभीउक्तव्रज मण्डलमें आनन्दव्याप्त हुआ।

सकल व्रजवासीगण ही निज निज भावसे आनन्द भर से श्री हरि को आलिङ्गन करनेलगे, वेसव नयन जलसे वक्षोदेश को प्लावित किये एवं उत्तमोत्तम कदम्ब स्तवक की प्रभासे जैसे समुज्ज्वल हो उठे।

सर्वेश्वरस्त्वं परमुक्तिदस्त्वं
स्वात्म–प्रदस्त्वं स्वजनानुरागी ।
त्वमेव विज्ञान–सुखात्ममूर्तिः,
श्री वत्सलक्ष्मी निलयस्त्वमेव ॥६॥
विभ्राजितः कौस्तुभ कान्ति–वृन्दै,
र्जगज्जनिस्थेमलयैकहेतुः ।
अचिन्त्यशक्तिः पुरुषादिरूपो,
विध्यादयो देव ! तवैव भृत्याः ॥७॥
गोविन्द नन्दात्मज कंस वंश,–
निसूदन् श्रीधरः नःपुणीहि !

उससमय श्रीहरि कोदर्शन करने के लिए वहाँपर वनवासी मुनिगणएवं गृहवासी यतिगण समवेत होगयेथेउनके सादर अभ्यर्थना से सकल सज्जनवृन्दसत्कृत होकर स्वरूपके उद्बोधनसे परमात्म भाव की स्फूर्त्ति निबन्धन उनको स्तव करनेके लिएप्रबृत्त होगये ॥५॥

तुमही सर्वेश्वर हो, तुमही परम मुक्तिदाता निजआत्म दान तुमही करते हो भक्तजनानुरागी तुमहो विज्ञानघन मूर्त्ति श्रीवत्स-लाच्छन लक्ष्मीपतिभी तुमही हो ॥६ ॥

कौस्तुभ की कान्तिसे से तुमही देदीप्यमान होतेहो, जगत्की सृष्टि स्थिति एवं लयकाएकमात्र निदान अचिन्त्यशक्ति सम्पन्न एवं सर्वादि पुरुषोत्तम तुमही हो देव ! ब्रह्मा प्रभृति समस्त देवगणतुम्हारे ही भृत्य हैं ॥७॥

हे गोविन्द । हेनन्दनन्दन ! हेकंस–वंशनिसूदन ! हेश्रीधर ! हे गोकुलाधीश ! हमसबकोपवित्रकरो । हेउदारकीर्त्ति ! निजगणकेसाथ

श्री गोकुलाधीश जयत्वमुच्चै,
रिहस्वकैः सार्द्धमुदार कीर्त्तिः ।।८।।
तव भक्ति रच्युत करोति परां,
मुदिरद्युते मुदमुदारमणे ।
प्रतिदेहि तां नवविधां तदिमां
वृणुमो बयं वरमतोन न परम् ।।९।।
शिविका रथ वाजि--राजितै,
र्विपिनेषु स्वजनै रथावृतः ।
विहरन् रसभोजनैरथो,
मुमुदेऽसौ परयाश्रियाच्चिंतः ।। १० ।।
सखिभिः सह धेनु–सञ्चयान,
स्वसमानै र्गुणरूप सम्पदा ।

तुमसर्वथाही जययुक्तहो ।।८।।

"हे अच्युत ! हे मेघश्यामल ! हेउदार शिरोमणि ! भक्ति ही तुम्हें आनन्दित करती है, अतएवपरमानन्द विधायिनी उस नवविध भक्ति की हम सव प्रार्थना करतेहैं, हमें उस भक्तिको प्रदानकरो अन्य कुछभी प्रार्थना नही हैं ।।९।।

तदनन्तरश्रीकृष्ण शिविका रथ अश्वादि यानमें आरोहण पूर्वक परम शोभासम्पन्न एवं स्वपरिकर वेष्टित होकर वनवनमें विहारकरते करते रसास्वादन करने लगे ।।१०।।

गुण रूप सम्पद में निजसमान सखागणके साथ आपने गिरिराजके वन वनमें धेनुपालन करते करते विविध केलिकला का विस्तार किया ।।११।।

गिरिराज--वनेषु पालयन्,
विविधाः केलिकलास्ततान सः ॥ ११

वनिताः स नितान्त—सुन्दरी,
निशि वृन्दाविपिने विशन् दरीः
सुख सोम विलास लालसः,
प्रभुरानन्दमयोऽप्यरीरमत् ॥१२॥

एता विष्णो र्नन्द पुत्रस्य नित्या,
लीलानित्यानन्दमूर्त्तेःप्रदिष्टाः ।
श्रद्धावद्भिः कीर्त्यमानाः समन्तात्,
संसाराग्नि प्रौढ़मुन्मूलयति ॥१३॥

विद्याभूषणभणितं हरि चरितं, चित्सुखात्मकं ह्येतत् ।
परिगीतं शुक मुनिना सद्सि, सेव्यं स्वरूपमिव ॥१४॥

अत्युत्कृष्ट विलास—लालस आनन्दमय प्रभु अतिसुन्दरी वनिता गणको वृन्दावनमें रात्रिकालमें लेआकर गुहाभ्यन्तरमें प्रविष्ट होकर रमणमें प्रवृत्त होगये ॥ १२ ॥

नन्दनन्दन नित्यानन्दमय श्रीविष्णु की 'ऐसव नित्यलीला' शास्त्र समूह में वर्णित हैं--श्रद्धावान्‌जनगण इसका कीर्त्तनकरनेसेमहासंसार-दावाग्निभी सम्यक् प्रकारसे उन्मूलित होगी । १३ ॥

चिदानन्दात्मक श्रीहरिविग्रहवत् चित्सुखधन एवं शुक मुनि द्वारा परिगीत विद्याभूषण-कथित इसचरित का (लीला) आस्वादन सज्जनबृन्दकरें ॥१४॥

ऐश्वर्य्यापरिकीर्त्तनाद् व्रजविधोः कृष्णस्य ये साधवः,
स्तापाग्नि–प्रतिलीढ़ हृत्सरसिजाः म्लायन्तिशुष्यत्त्विषः
तेषां ताप--विमर्दनाय विशदा श्रीसार्वभौम प्रभोः
कारुण्यादुदितेयमाशु भवतादैश्वर्य्य--कादम्बिनी ॥१५॥

ऐश्वर्य्यं पूर्वंयम पूर्वपर्वा, कादम्बिनी नन्दसुतावलम्बा ।
स्याद् भूवियत् सिन्धुशशाङ्क--शाके
सतां प्रिया तच्चरणाश्रितानां ॥ १६ ॥

व्रजचन्द्रमा श्रीकृष्णकी ऐश्वर्य्यलीला का कथन न होनेसे जो सब साधुओंके हृदयपद्म तापाग्निसे दग्धहो रहे हैं एवंजिनकेदेह म्लान हो रहे हैं-उनसव के ही तापनाश करनेकेलिए श्रीमन्महाप्रभुकी करुणा से (अथवा श्रीकृष्णदेवसार्वभौमकीकरुणासे) सत्वरविशदनिर्म्मल ऐश्वर्य्य--कादम्बिनी (मेघ) उदित हुआ ॥ १५

इत्यैश्वर्य्य-कादम्बिन्यां श्रीगोकुलागमनाद्युत्तर लीलावर्णनं,

सप्तमी वृष्टिः ॥७॥

नन्दनन्दनावलम्बी अपूर्व प्रस्तावयुक्ता ऐश्वर्य्य कादम्बिनी १७०१शकाब्दामेंरचितहोकरश्रीहरिकेचरणाश्रितसज्जनगणकेप्रियहो ॥

भूदेवान्वयजातेन भूगर्भान्वयवर्त्तिणा,
विदुषाहरिदासेन वृन्दावननिवासिना ।
नत्वा गदाधरं देवं गौरचन्द्रसमन्वितम्,
ऐश कादम्बिनी भाषा मुदेयं पूर्णता कृता ॥

श्रीश्रीमद् गुरवेसमर्पणमस्तु ॥

प्रकाशितग्रन्थरत्न

१ । नृसिंहचतुर्द्दशी
२ । श्रीसाधनामृतचन्द्रिका
(मूल अनुवाद)
३ । श्रीसाधनामृतचन्द्रिका
(वङ्गलापयार)
४ । श्रीगौरगोबिन्दार्च्चनपद्धति ।
५ । श्रीराधाकृष्णार्च्चनदीपिका
६ । श्रीगोविन्दलीलामृत
मूल टीका अनुवाद (सर्ग—१-४)
७ । संकल्पकल्पद्रुम
सटीक, सानुवाद
८ । ऐश्वर्य्यकादम्बिनी
(मूल अनुवाद)

प्रकाशनरतग्रन्

१ । प्रेम सम्पुट
(मूल, टीका, अनु
२ । श्रीकृष्णभजनामृ
(सानुवाद)
३ । ब्रजरीति चिन्तामी
(मूल टीका अनुवा

प्राप्ति स्थान

सद्ग्रन्थ प्रकाशक:

श्री गदाधरगौरहरि प्रेस
श्री हरिदासनिवास
कालीदह वृन्दाबन